यशपाल के धर्म विषयक विचार

डॉ वन्दना पालीवाल
संजय कालौनी सासनी हाथरस
9412385550
ईमेल–vpaliwal82@gmail.com

शोध सारांश

हिन्दु सम्प्रदाय में धर्म को जीवन को धारण करने समझने और परिष्कृत करने की विधि बताया गया है धर्म को परिभाषित करना भी उतना ही कठिन है जितना ईश्वर को दुनिया के तमाम विचारको ने जिन्होने धर्म पर विचार किया है अलग अलग परिभाषायें दी हैं। इस नजरिये ये वैदिक ऋषियों का विचार सबसे ज्यादा उपर्युक्त लगता है कि सृष्टि और स्वंय के हित और विकास में किये जाने वाले सभी कर्म धर्म है।

हिन्दी कहानी विकास परम्परा में यशपाल अकेले लेखक हैं जिसमें यथार्थवादी रचनादृष्टि के अनेक स्तर और अनेक रुप विद्यमान हैं। कथा वस्तु ही नही शिल्प के स्तर पर भी उनका अवदान हिन्दी कहानी में ऐसा है। जिसे रेखाकिंत किया जाना बाकी है।

यशपाल ने अपनी कहानियों में हिन्दू धर्म के कठमुल्लेपन का ही विरोध नही किया है बल्कि इस्लाम में बहिष्त की कल्पना और आदम–हौवा द्वारा वर्णित फल खाने की घटना का निष्कर्ष निकाला है।

यशपाल ने धर्म विषयक विचारो की अभिव्यक्ति उनकी 'प्रायश्चित' (पिंजरे की उडान) ज्ञानदान, धर्मरक्षा, उत्तमी की माँ, राजा, दासधर्म, शम्बूक आदि कहानियो में हुई है वे आध्यात्मिक शास्त्रार्थ की खिल्ली उडाते हैं। कहानी 'सत्य का मूल' में धर्म विषयक मान्यता पर स्पष्ट विचार व्यक्त करते हैं।

मास्को में रुसियो मे सैकडो गिरजे मस्जिदे और सेनामॉग (यहूदियों के उपासना स्थान) गिरा दिये और शेष के ऊपर मोटे अक्षरो में लिख दिया–

मजहब जनसमुदाय को अकर्मण्यता में गर्क कर देने वाला अफीम का नशा है और उन्हें स्कूलों, क्लवों, अजायवघरो में बदल दिया है।xxx

अवनति के गडडे मे गिरकर भारत के सडते रहने का कारण भारत में मजहब के भारात्मक नशे की व्यापकता थी।xxx

यशपाल ने कुछ पुराण इतिहास विषयक कहानियो का सृजन दिया है जिसके माध्यम से हिन्दू धर्म की कहानियो विश्वासो और मान्यताओ पर प्रहार किया है।

यशपाल के धर्म विषयक विचार

प्रस्तावना

धर्म का शाब्दिक अर्थ है धारण करना जो धारण करने योग्य हो वही धर्म है पृथ्वी समस्त प्राणियों को धारण किये हुए है। जैसे हम किसी नियम को व्रत को धारण करते है इत्यादि कुछ लोगों

के अनुसार आग का धर्म है जलना, धरती का धर्म है धारण करना ,और जन्म देना, हवा का धर्म है जीवन देना, इसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति का अपना धर्म है।

धर्म मूल स्वभाव की खोज है। धर्म एक रहस्य है संवेदना, संवाद है और आत्मा की खोज है धर्म स्वंय की खोज का नाम है। जब भी हम धर्म करते हैं। तो यह ध्वनित होता है कि कुछ और जिसे जानना जरुरी है कोई शक्ति है कोई रहस्य है धर्म है अनंत और अज्ञात में छलांग लगाना धर्म है जन्म मृत्यु और जीवन को जानना।

साहित्यकार का धर्म है यदि उसके सामने अत्याचार हो रहा है उस बीच में उसे पड़ना है या नही इस पर विचार करना कई लोग सोचते है मैं बीच में क्यों पड़ूॅ मैं क्या कर सकता हूॅ लेकिन कुछ लोग ऐसे हैं जो सोचते है मैं जो कर सकता हूॅ करुॅगा मैं बीच में दखल दूॅगा साहित्यकार को एक असाधारण काम मिलता है कि पीडित के पक्ष में और पीडक के खिलाफ खडें हो कोई और शक्ति होती है जो साहित्यकार से कुछ कहलवाती है।

जहाँ तक यशपाल के धर्म विषयक विचारों का सम्बन्ध हैं यह एकदम स्पष्ट हैं कि वह मार्क्सवादी विचारधारा के कारण धर्म को निरर्थक एंव ढोंग की संज्ञा प्रदान करते है, वे धर्म को अफीम का नशा कहकर पुकारते हैं। वे ईश्वर में कतई विश्वास नहीं करते। वे आर्य समाजी संस्कारों मे पले बढे किन्तु कठोर नियम–संयम ब्रहम्चर्य आदि की खिल्ली उड़ाते हैं। यशपाल नास्तिक हैं। वे धर्म को समाज के शोषक वर्ग का प्रपंच और मनुष्यता (मानवता) का सबसे बडा शत्रु मानते हैं।[i] यहॉ तक कि वे भाग्य वाद में विश्वास नही करते।[ii] वैदिक धर्म के प्रचारक मनु द्वारा की गयी वर्णाश्रम व्यवस्था तक का वे विरोध करते हैं।[iii] पुण्यार्जन करके परलोक संभालने के वे सख्त विरोधी हैं। इसीलिए उनकी कहानियों में धर्म जैसी संस्था का पुरजोर विरोध किया गया है। इसीलिए धार्मिक, विश्वासों, रूढ़ियों, परम्पराओं आदि पर भी उन्होंने अपनी कहानियों में प्रहार किया है। 'चक्कर क्लब' में इतिहासज्ञ पात्र खड़ा करके उन्होने उसके मुॅह से कहलवाया है–

'' मनुष्य ने ईश्वर विश्वास को बनाया था भय से रक्षा और सहारा पान के लिए व्यवहार के नियम और मार्ग बनाने के लिए। मनुष्य समाज के विकास और इतिहास में उसका उपयोग भी हुआ और मनुष्य समाज अपनी परिस्थितियों के अनुसार ईश्वर के रुप और उसकी आस्थाओं को बदलता रहा है। यह विश्वास समाज में विश्वास कायम रखने का उपयोगी साधन बन गया परन्तु हुआ क्या ? जैसे समाज में बलवान श्रेणी ने जीवन– निर्वाह के साधनों को अपने वश में कर लिया, उसी तरह समाज में व्यवस्था कायम रखने के लिए उपयोगी साधन को भी समाज बलवान श्रेणी ने अपने स्वार्थ के लिए हथिया लिया। इस साधन से वे सदा ही अपने स्वार्थो और हितों की रक्षा करते रहे। और आज भी कर रहे हैं। आज ईश्वर विश्वास का अर्थ है अपनी कठिनाईयों और दुःख को अपने ही कर्मो का फल मानना। इसका अर्थ है अपने आपको भगवान के कारिन्दे समझन वालों के श्रेंणी स्वार्थ की प्रेरणा के आगे सिर झुकाना।[iv]

श्री पारसनाथ मिश्र का यशपाल के धर्म विषयक विचारो के विषय में स्पष्ट मत है कि यशपाल मार्क्सवादी विचारधारा में आस्था रखते थे, इसलिए उनके धर्म विषयक विचार वे ही हैं, जो मार्क्सवाद में धर्म के विषय में व्यक्त किये गये है'–

'' समाज में अर्थ और काम के अतिरिक्त धर्म ईश्वर, राजनीति कला आदि तत्वों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। यशपाल ने इन सबके सम्बन्ध में मार्क्सवादी दृष्टिकोण से विचार किया है। समाज में धर्म की स्थापना समाज व्यवस्था को सुदृढ़ एवं सुचारु रूप से संचालित करने के लिए ही की गयी थी। परन्तु कालान्तर में धर्म रूढ़ होकर समाज के विकास में बाधक होने लगा। यशपाल जैसा विद्राही और परम्परागत मान्यताओं का खण्डन करने वाला कलाकार स्वभावतः इस प्रकार के धर्म को अमान्य घोषित करता है XXX संक्षेप में धर्म और ईश्वर की भावना को यशपाल शोषक श्रेणी का प्रपंच मानते हैं। धर्म को वे मनुष्यता का सबसे बड़ा शत्रु मानते हैं।[v]

जैसा कि कहा जा चुका है कि यशपाल का बाल्याकाल आर्य समाजी संस्कारो एवं गुरुकुलों में बीता, किन्तु यशपाल ने आर्य समाज द्वारा आरोपित कठमुल्लेपन का घोर विरोध किया है। श्री बैजनाथ के शब्दों में–

''मार्क्सवादी होने के कारण यशपाल पूर्णतः नास्तिक थे। ईश्वर और धर्म आदि पर उनका तनिक भी विश्वास नहीं था। यही कारण है कि धर्म और ईश्वर आदि के नाम पर होने वाले मानवीय शोषण को उन्होने खुलकर निन्दा की। XXX

कहना न होगा कि उनके सहज व्यक्तित्व एवं सर्वथा जीवन और आधुनिक विचार–धारा का निर्माण उनके मस्तिष्क में जमे आर्य समाज के संस्कार की प्रतिक्रिया स्वरूप ही हुआ और जीवन के अन्त तक बना रहा। XXX वर्जनाओ और निषेधों के द्वारा बलपूर्वक प्रकृति पर विजय पाना असहज ही नहीं बिल्कुल असंभव है।

यशपाल की इस मान्यता का अस्वीकार नहीं किया जा सकता। यशपाल की कहानी 'धर्मरक्षा' यद्यपि यौन–समस्या पर आधारित है, परन्तु उसका मूलस्वर आर्य समाजी संस्कार द्वारा निर्धारित निषेध–कामवासना के दमन की भंयकर प्रतिक्रिया का है।[vi]

धर्म के मेरुदण्ड के रुप में वर्णाश्रम व्यवस्था उसके षोडश संस्कार कर्मफल के सिद्धान्त का भी यशपाल ने खुलकर विरोध किया है। उनकी धारणा है कि दलितों द्वारा सवर्णो की सेवा ही भगवान से साक्षात्कार का साधन मानना मेरे लिए सम्भव नहीं है। उनके स्पष्ट विचार हैं–

'' हिन्दू या आर्य समाजिक मर्यादा के मुख्य नियायक मनु महाराज ने शायद स्वयं संसार के भोग–विलास से विरक्त होकर भी समाज व्यवस्था के लिए ऐसे संयम निश्चित किये, जिनसे उनकी श्रेणी का शासन हजारों वर्ष तक दृढ़ बना रहा। और शोषित–दलित वर्ग की अपनी मुक्ति या आत्म–निर्माण की बात सोचना भी पाप समझा जाता रहा। सेवक वर्ग के लिए मनुष्य जीवन का उद्देश्य

पूरा करने का अर्थात् ईश्वर से साक्षात्कार का साधन भी केवल स्वामी श्रेणी की सेवा ही निश्चित किया गया।[vii]

ईश्वर कृपा और क्रोध को वे अंधविश्वास का अंधकार कहते हैं और उनकी मान्यता है कि यह अन्धकार भी सिमटता जा रहा है। वे भौतिक ज्ञान का ही जीवन का लक्ष्य मानते हैं और भौतिक साधनों पर ही भौतिक ज्ञान के आधारित रहने की बात स्वीकारते हैं–

''मानव समाज का इतिहास इस बात का साक्षी है कि मनुष्य के भौतिक ज्ञान का प्रकाश बढ़ने से ईश्वर की कृपा और क्रोध के अन्धविश्वास का अन्धकार सिमटता जाता है।xxx

इतिहास की साक्षी और वर्तमान युग के भिन्न–भिन्न समाजों के भौतिक ज्ञान और उनके आध्यात्मिक ज्ञान की तुलना करने से हम इस परिणाम पर पहुॅचते हैं कि मनुष्य का आध्यात्मिक ज्ञान भी उनके भौतिक ज्ञान और भौतिक संसाधनो पर ही निर्भर करता है।[viii]

उनकी यह भी धारणा हैं कि जैसे– जैसे समाज का अनुभूत ज्ञान आगे बढ़ता जाता है वैसे–वैसे ईश्वर की परिकल्पना का भी विकास होता चला जाता है। इसे वह प्रगतिशीलता का विचार कहते हैः–

''मनुष्य समाज के अनुभव के आधार पर समाज के जीवन निर्वाह के साधनों के विकास और भौतिक ज्ञान की उन्नति से सम्पूर्ण संसार और सम्पूर्ण भौतिक शक्तियों के स्वामी अनादि, सदा एक रुप–रस रहने वाले विश्व के आत्मारुप, अब्ज, आधार रूप और उसके कारण पूर्ण चेतना और ज्ञान स्वरूप भगवान की कल्पना का विकास हुआ है। ज्यों–ज्यों संसार और उसके रहस्यों के सम्बन्ध में मनुष्य का ज्ञान बढ़ता गया है भगवान के सम्बन्ध में मनुष्य की कल्पना सूक्ष्म होती गयी है।[ix]

यशपाल की इस वैचारिक पृष्ठभूमि के चलते उनकी कहानियो में भी यथावत धार्मिक पाखण्ड पर यशपाल ने भरपूर चोट की है। वे तीर्थ स्थानों में जाकर दान–पुण्य करने की प्रवृति पर भी चोट करते हैं–

'' तीर्थ स्थान में दो लाख रुपये की धर्मशाला बनाकर स्वर्ग में अपना स्थान रिजर्व कर लेना सरल उपाय है। इस उद्देश्य से भूखे भिखमंगो को भोजन भी कराया जाता है और जाड़ा आने पर उन्हें सौ–दो सौ कम्बल भी बाँटे जाते हैं। इस दुनिया में कौशल और चातुर्य से दूसरों के परिश्रम का फल (पैसा) ऐंठकर और फिर उन्हें दान देकर उस दुनिया का प्रबन्ध किया जाता है, लेकिन पुण्य कमा सकने के इस धर्म को पूरा कर सकने के लिए इस दुनिया में कंगाली कायम रखना आवश्यक है। व्यक्तिवादी धर्म मनुष्य को मनुष्य का शत्रु बना देता है इसलिए मनुष्य की लूट – खसोट की जाती है और अदृश्य भगवान को अपना समझा जाता है इस दुनिया में जिन सुखों के लिए मन तरसता रहता है उन्हें उस दुनिया में पाने के लिए भगवान के सामने गिड़गिड़ाया जाता है।[x]

जैसा कि पहले कह आये हैं कि यशपाल ने धर्म के साथ –साथ हिन्दू धर्म की वर्णाश्रम व्यवस्था का भी विरोध किया है और वर्णाश्रम व्यवस्था को सामाजिक शोषण का हेतु माना हैः–

''वर्णाश्रम धर्म का मुख्य प्रयोजन मौलिक शासक भेड़ियों के आर्थिक सामाजिक और राजनीतिक नियंत्रण को उनके वंशों की परम्परा में सुरक्षित रखना और साधनहीन श्रेणी दास और शूद्र को निरन्तर स्वामी श्रेणी की सेवा और उनके लिए आवश्यक पदार्थ उत्पन्न करने के कठिन और अप्रिय श्रम करने के लिए विवश रखता था।[xi]

इसी प्रकार यशपाल भाग्यवाद के भी कटु आलोचक थे ऐसा मत श्री पारसनाथ मिश्र ने व्यक्त किया है।

मार्क्सवादी विचार – दर्शन के अनुसार यशपाल भाग्यवाद जैसी किसी शक्ति को नहीं मानते उन्हें न तो ईश्वर की विधायक शक्ति में विश्वास है और न ही वे इस बात को स्वीकार करते हैं कि जीवन और जगत् का प्रत्येक कार्य उसी परमसत्ता के संकेत पर होता है उस अज्ञात सत्ता के सामने विश्व की तमाम शक्तियाँ लाचार हैं उस पर भी उनका विश्वास नहीं है।[xii]

यशपाल परलोक की कल्पना पर भी प्रहार करते हैं वे भगवान देखते हैं उस मान्यता का भी पुरजोर विरोध करते हैं पुण्य कमाकर परलोक संभालने वालों पर भी वे यथाशक्ति प्रहार करते हैं परलोक कहानी में वे अन्तिम निष्कर्ष स्वरूप यह टिप्पणी करते हैं–

''मेरी आठ बरस की भोली लड़की की ही भविष्य की आशा–सान्त्वना पर नहीं जीती उसकी चतुर पक्की माँ भी भविष्य की सान्त्वना का भरोसा रखती है फकीर को चुटकी देती है ब्राह्मण भोजन कराती है मल्ली की माँ ही क्या भारतवासी ही भविष्य की आशा पर जीते हैं परलोक में सुख भोग करेंगे अगला जन्म सुखमय होगा उसी आशा में हम इस जीवन की कदर्य अवस्था को सह जाते हैं सांसारिक पदार्थों में आसक्त होने से परलोक प्राप्ति में बाधा होगी,

इसलिए हम इस ओर ध्यान नहीं देना चाहते। मन में स्वभावतः समृद्धि की इच्छा होती है, परन्तु हम उसे समझने हैं लिप्त होना अच्छा नहीं। मार पड़ती है तो कहते हैं– भगवान देखते हैं, समझेंगे।[xiii]

इसी प्रकार भगवान समदृष्टि रखते है, इस मान्यता का भी यशपाल 'वो दुनिया' कहानी में लाखे लोगो पर कड़वी टिप्पणी करते है।–

'' हमारे लाला वास्तव में दूरदर्शी हैं। उनकी व्यापारिक बुद्धि केवल इस दुनिया तक ही सीमित नही वे उस दुनिया को भी नफे के तरीके पर कमाते है। भगवान की समदृष्टि में सब एक समान। वहाँ यह नहीं लिखा जाएगा कि चींटी को तृप्त किया जाएगा या हाथी को, इसलिए लाला एक छटांक आटे में आधी छटांक चीनी मिलाकर प्रायः भ्रमण के समय चीटियों के भिटे पर बिखेरकर हजारो नहीं लाखों जीवों को तृप्त करने का पुण्य भगवान के रजिस्टर में अपने नाम दर्ज करा देते हैं और फिर करुणा विगलित स्वर में कहते हैं– इन बेचारे असहाय जीवों का संसार में कौन है ? आदमी को भगवान ने दो हाथ–पैर दिये हैं।[xiv]

असहाय जीवों पर दया करने का उपदेश देने वाले सन्तों–महात्माओं को भी वे आड़े हाथों लेते हैं। यशपाल ऐसी आशा करते हैं कि संसार में मनुष्य को आत्म निर्माण का अवसर और अधिकार कब

मिलेगा ? कहानी 'मतदान' में (भस्मावृत्त चिन्गारी' संग्रह की) 'मुनाफाखेर सेठ परसादी लाल भूखों मरने वालों की लाश ठिकाने लगवाने के लिए बीस हजार की लकडी दान में देते हैं, यशपाल उन पर चुटकी लेते है–

'' सेठ के द्वार पर दान था, भीतर व्यापार। एक के बाद दूसरा दलाल आकर चावल के सौदे की बात करता था। भूखे कंगालो के प्रति बॅट जाने वाली सेठ जी की उदारता, व्यापार के क्षेत्र में अविचल सेनापति की दृढ़ता में बदल जाती।xxx

व्यापार व्यापार है और धर्म धर्म। धर्मादय का रुपया कभी रोकड़ में लगा देते तो उसे ब्याज और मूल सहित फिर धर्मादय में कर देते। वह भगवद् अर्पण था। कंगालो की दुर्दशा देखकर उसी खाते में लालाजी दो बोरी चना बँटवा रहे थे। फिर भी एक लाख व्यालस हजार रुपया धर्मादय मे हो रहा था। जैसे मुनाफा बढ़ा, वैसे धर्मादय भी हो रहा था।[xv]

यशपाल ने अपने धर्म विषयक विचारो को व्यक्त करने के लिए अनेक कहानियो की रचना की।

निष्कर्ष–

यशपाल ने अपने साहित्य में धर्म के मेरुदण्ड के रुप में वर्णाश्रम व्यवस्था उसके शोडष संस्कार कर्मफल के सिद्धान्त का भी यशपाल ने खुलकर विरोध किया है। उनकी धारणा है दलितो द्वारा सवर्णो की सेवा ही भगवान से साक्षात्कार मानना मेरे लिए संभव नहीं।

यशपाल ने लेखनी चलाकर अपने मस्तिष्क में आये विचारो को वाणी दी है। धर्म के नाम पर आज समाज में जो हो रहा है वह असहनीय है। उसके लिए समाज के हर वर्ग को जागरुक होना पडेगा। यशपाल के धर्म सम्बन्धी यह विचार धर्म एक ढोग है पाखण्ड है ईश्वर का अस्तित्व नही उसके नाम पर लोग सामान्य जनो का शोषण करते है।

सन्दर्भ सूची

[i] कान्तिकारी यशपालः एक समर्पित व्यक्तित्व, पृष्ठ. 272 मधुरेश–लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1979
[ii] कान्तिकारी यशपालः एक समर्पित व्यक्तित्व, पृष्ठ. 273 मधुरेश–लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1979
[iii] गॉधीवाद की शवपरीक्षा पृष्ठ.110 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद आठवा संस्करण 1982
[iv] चक्कर क्लब सातवॉ संस्करण पृष्ठ 127 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1983
[v] कान्तिकारी यशपालः एक समर्पित व्यक्तित्व, पृष्ठ. 272 मधुरेश–लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1979
[vi] कान्तिकारी यशपालः एक समर्पित व्यक्तित्व, पृष्ठ. 231–32 मधुरेश–लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1979
[vii] गॉधीवाद की शवपरीक्षा पृष्ठ 40 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद आठवा संस्करण 1982
[viii] गॉधीवाद की शवपरीक्षा पृष्ठ 34 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद आठवा संस्करण 1982
[ix] गॉधीवाद की शवपरीक्षा पृष्ठ 32–33 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद आठवा संस्करण 1982
[x] वो दुनिया पृष्ठ 93 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1941
[xi] गॉधीवाद की शवपरीक्षा पृष्ठ 110 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद आठवा संस्करण 1982
[xii] कान्तिकारी यशपालः एक समर्पित व्यक्तित्व, पृष्ठ. 273 मधुरेश–लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1979
[xiii] पिजड़े की उडान पृष्ठ 105 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1939
[xiv] वो दुनिया पृष्ठ 93–94 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1941
[xv] भस्मावत चिंगारी पृष्ठ 23 लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद 1946